पाठ्य सामग्री
षष्ठ पत्र, स्नातक प्रतिष्ठा

KHUSHI
Date:
Page: ①

भारतीय काव्यशास्त्र — अलंकार
(पहला भाग)

— चंदेश्वर प्रसाद सिंह
अध्यक्ष हिन्दी विभाग,
अल-हफ़ीज़ कॉलेज, आरा

प्रिय छात्र-छात्राओं!

अलंकार एक सैद्धान्तिक विषय है, इसलिए इसमें शत-प्रतिशत अंक मिलने की संभावना रहती है। परंतु दुर्भाग्य से, परीक्षार्थी इसकी ओर से उदासीन रहते हैं। इसे शुष्क, नीरस और दुर्बोध्य समझते हैं, जबकि यह भ्रम के सिवा कुछ नहीं है। हाँ, इसमें कुछ चीजों को याद रखना पड़ता है। यह भी कोई मुश्किल काम नहीं है। यदि विषय में आपकी रुचि हो और उसे ठीक से समझते हों तो अलंकार का लक्षण (या परिभाषा) और उदाहरण आप शीघ्र कंठस्थ कर लेंगे। यदि फिर भी कठिनाई हो तो इसके लिए आपको तीन बातें बताना चाहता हूँ। पहली बात यह कि परिभाषा छोटी रखें। शब्दों के हेर-फेर से आप स्वयं भी परिभाषा बना सकते हैं, बशर्ते कि आप उस अलंकार को समझते हों। दूसरी बात यह है कि उदाहरण भी छोटे चुनें। सरल और सरस उदाहरण चुनें। यों भी पद्यात्मक पंक्तियाँ दो-चार बार दुहराने पर याद हो जाती हैं। तीसरी बात यह कि आप चाहें तो गद्य में भी उदाहरण दे सकते हैं। गद्य को भी आकर्षक और प्रभावशाली बनाने के लिए अलंकारों का समावेश किया जाता है।

अलंकार : स्वरूप और महत्त्व

सौन्दर्य के लिए प्रयत्नशील रहना और सौन्दर्य के प्रति आकर्षित होना मानव के लिए स्वाभाविक है। यह सौन्दर्य वेशभूषा में हो या वाणी में। मनुष्य की इसी प्रवृत्ति ने अलंकारों को जन्म दिया है। अलंकार वाणी के विभूषण हैं। वाणी को सुन्दर और प्रभावशाली बनाने के लिए आवश्यक हैं। आवश्यक होने का यह तात्पर्य नहीं कि अलंकारों के बिना कविता नहीं हो सकती अथवा वाणी की अभिव्यक्ति नहीं हो सकती। वाणी अथवा काव्यात्मक अभिव्यक्ति को अधिक स्पष्ट करने के लिए तथा प्रभावशाली संप्रेषण के लिए यह अनिवार्य है। अलंकृत होकर कविता सामान्य नहीं रह जाती। सुसज्जित और रमणीय हो जाती है। इस प्रकार वह चमत्कारपूर्ण और विशिष्ट कथन बन जाती है।

'अलंकार' दो शब्दों के योग से बना है— अलम् + कार। 'अलम्' का अर्थ है— विभूषित या शोभित और 'कार' का अर्थ है— →

करनेवाला। इस प्रकार अलंकार का अर्थ है, जो किसी को शोभित करे। उदाहरण के लिए 'बच्चा सुंदर है' और 'बच्चा फूल जैसा सुंदर है' इन दोनों में से दूसरा वाक्य अधिक प्रभावशाली है। अलंकृत (फूल जैसा) कथन होने के कारण इसमें विशिष्टता आ गयी है। जिस प्रकार आभूषणों से सुसज्जित स्त्री के सौंदर्य में एक जगमगाहट भर जाती है, उसी प्रकार अलंकारों के प्रयोग से कविता-कामिनी दमक उठती है। यहाँ उल्लेखनीय है कि आभूषण बाह्य प्रसाधन हैं जो सौंदर्य में वृद्धि कर देते हैं। उसी तरह अलंकार भी कविता की बाह्य शोभाकारक धर्म हैं। इसलिए अलंकार को परिभाषित करते हुए कहा गया है — "शब्द और अर्थ की शोभा बढ़ानेवाले धर्म को अलंकार कहते हैं" आचार्य दण्डी के शब्दों में — "काव्यशोभाकरान् धर्मान् अलंकारान् प्रचक्षते।"

उपर्युक्त परिभाषा में कविता की जगह शब्द और अर्थ का प्रयोग साभिप्राय किया गया है। कविता शब्द और अर्थ से ही बनती है। अलंकार के बिना कविता हो सकती है लेकिन शब्दार्थ के बिना कविता नहीं हो सकती। आचार्य मम्मट ने अलंकारविहीन शब्दार्थ को भी काव्य की संज्ञा प्रदान की है — "तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलंकृती पुनः क्वापि" आधुनिक हिन्दी कविता की प्रवृत्तियों के लिए यह मान्यता अधिक उपयुक्त है। आजकल रचना और आलोचना — दोनो क्षेत्रों में अलंकारों को उतना महत्व नहीं दिया जाता। जाने-अनजाने उनका प्रयोग होता रहता है, किन्तु पहले की तरह सजग-सचेष्ट होकर अलंकारों के प्रयोग पर बल नहीं दिया जाता। बावजूद इसके, आज के गद्यकाल में गद्य को भी आकर्षक और प्रभावशाली बनाने के लिए संचार-माध्यमों में भाषा को सुसज्जित किया जाता है। इसके विपरीत, पुराने आचार्यों में अनेक ऐसे हैं जो अलंकारविहीन काव्य को काव्य की संज्ञा ही नहीं देते और अलंकार को काव्य की आत्मा तक मानते हैं। हिन्दी में केशवदास और रीतिकालीन कवि इसी मत के पोषक थे —

"जदपि सुजाति सुलक्षणी, सुबरन सरस सुवृत्त।
भूषण बिनु न बिराजई, कविता वनिता मित्त॥"

बहरहाल, अलंकारों का विवेचन और उनका वर्गीकरण शब्द और अर्थ के आधार किया जाता है। शब्द और अर्थ व्यवहार के लिए दो हैं किन्तु वस्तुतः दोनों अभिन्न हैं। शब्द है तो उसका कुछ अर्थ अवश्य होगा। निरर्थक शब्दों के व्यवहार का कोई मतलब नहीं। इसी तरह अर्थ की अभिव्यक्ति के लिए शब्द का आधार आवश्यक है। वास्तव में, शब्द और अर्थ शरीर और →

प्राण की तरह परस्पर-निर्भर है। शब्द के बिना अर्थ अमूर्त रहता है और अर्थ के बिना शब्द बेजान। दोनों एक-दूसरे के बिना अप्रयोजनीय-अनुपयोगी होते हैं इसलिए ~~[illegible]~~ दोनों जल और उसकी लहर की तरह देखने में भिन्न किन्तु वास्तव में अभिन्न होते हैं। गोस्वामी तुलसीदास के शब्दों में — "गिरा अरथ जल बीचि सम कहियत भिन्न न भिन्न।" इस तरह शब्द के आधार पर शब्दालंकार और अर्थ के आधार पर अर्थालंकार — ये दो भेद किये गये हैं। ये भेद प्रधानता के आधार पर किये गये हैं। जहाँ शब्द और अर्थ दोनों में अलंकार हो वहाँ उभयालंकार अथवा शब्दार्थालंकार नामक तीसरा भेद भी है, लेकिन यह संख्या में अत्यल्प है। प्रमुख भेद दो ही हैं।

शब्दालंकार में शब्द की प्रधानता होती है। अर्थात् अलंकार शब्द में होता है। यदि उस शब्द की जगह उसका पर्यायवाची शब्द रख दिया जाय तो आवश्यक नहीं कि शब्दालंकार पूर्ववत् बना रहे। उदाहरण के लिए 'मंद मुसकान' में अनुप्रास अलंकार है किंतु 'धीमी हँसी' अथवा 'धीमी मुसकान' में नहीं है जबकि दोनों शब्द-प्रयोगों का अर्थ एक जैसा है। यह इसलिए है क्योंकि दोनों में 'मंद मुसकान' की तरह 'म' वर्ण की आवृत्ति नहीं है। अतः शब्दालंकार में अलंकार शब्द पर आधारित है, अर्थ पर नहीं। ठीक इसके विपरीत, अर्थालंकार में अलंकार अर्थ पर आधारित होता है और शब्द-विशेष की जगह उसका पर्यायवाची शब्द आने पर भी कोई फर्क नहीं पड़ता। जैसे — 'वह फूल-सा सुंदर है।' 'वह पुष्प-सा सुंदर है।' 'वह सुमन-सा सुंदर है।' इन तीनों वाक्यों में तीन शब्दों से सुंदरता की उपमा दी गयी है, लेकिन तीनों शब्दों का अर्थ एक ही है। अतः यहाँ उपमालंकार है। अर्थ पर आश्रित होने के कारण यह अर्थालंकार के अन्तर्गत है।

अलंकारों के भेद (शब्दालंकार)

1. अनुप्रास — वर्णों की आवृत्ति अनुप्रास है। जहाँ ~~[illegible]~~ स्वरों में अंतर होने पर भी व्यंजन वर्णों की आवृत्ति एक या अनेक बार हो वहाँ अनुप्रास अलंकार होता है। जैसे — 'तरनि तनूजा तट तमाल तरुवर बहु छाए'। यहाँ 'त' वर्ण की आवृत्ति हुई है। अथवा — 'मुदित महीपति मंदिर आए'। यहाँ 'म' वर्ण की आवृत्ति हुई है। अतः यहाँ अनुप्रास अलंकार है। इसके अन्य प्रकार इस तरह हैं — (क) छेकानुप्रास — जहाँ अनेक वर्णों की एक बार स्वरूपतः क्रमतः आवृत्ति हो वहाँ छेकानुप्रास होता है।
जैसे — 'बंदउँ गुरु पद पदुम परागा' — 'पद पदुम' में 'प' ~~[illegible]~~ तथा 'द' वर्ण की एक

बार स्वरूप और क्रम से आवृत्ति हुई है। अतः यहां छेकानुप्रास है।
अथवा — 'पारस परसि कुधातु सोहाई' — 'पारस परसि' में 'प' और 'र' की एक बार स्वरूप और क्रम से आवृत्ति हुई है। अतः यहां छेकानुप्रास है।

(ख) वृत्यनुप्रास

जहाँ एक व्यंजन वर्ण की एक बार या अनेक बार, अनेक व्यंजनों की एक बार या अनेक बार स्वरूपतः आवृत्ति हो अथवा अनेक व्यंजनो की अनेक बार स्वरूपतः क्रमतः आवृत्ति हो वहां वृत्यनुप्रास होता है।

वृत्ति का अर्थ है रसानुकूल वर्णों की योजना। अर्थात् श्रृंगार के लिए मधुर, वीररस के लिए कठोर वर्णों की योजना। इससे रस की व्यंजना में बड़ी सहायता मिलती है।

(1) एक बार एक व्यंजन की आवृत्ति —

"उघरहिं बिमल बिलोचन ही के। मिटहिं दोष दुख भव रजनी के॥"

— यहाँ 'ब' की एक बार 'द' की भी एक बार आवृत्ति है।

(2) एक व्यंजन की अनेक बार आवृत्ति —

"सबहिं सुलभ सब दिन सब देसा। सेवत सादर समन कलेसा॥"

— यहाँ एक 'स' वर्ण की अनेक बार आवृत्ति है।

(3) अनेक व्यंजनों की एक बार स्वरूपतः आवृत्ति —

"रस सरिता कब बक ~~[illegible]~~ अवगाहहिं"

— यहाँ 'रस सर' और 'कब बक' में अनेक वर्णों की एक बार केवल स्वरूपतः आवृत्ति हुई है।

(4) अनेक व्यंजनों की अनेक बार स्वरूपतः आवृत्ति —

"उस प्रमदा के अलकदाम से मादक सुरभि निकलती।"

— यहाँ 'मद', 'दम', 'म' में अनेक व्यंजनों की अनेक बार केवल स्वरूपतः आवृत्ति है।

(5) अनेक व्यंजनों की अनेक बार स्वरूपतः तथा क्रमतः आवृत्ति —

"विराजमाना वन एक ओर थी कलामयी केलिवती कलिन्दजा।"

— उपर्युक्त काव्य-पंक्ति में 'क' और 'ल' वर्ण की अनेक बार स्वरूपतः-क्रमतः आवृत्ति है।

अतः उपर्युक्त उदाहरणों में वृत्यनुप्रास अलंकार है।

(ग) लाटानुप्रास

तात्पर्यमात्र के भेद से शब्द और अर्थ दोनों की पुनरुक्ति को लाटानुप्रास कहते हैं।

कभी-कभी एक शब्द के स्थान पर वाक्यखंड की भी आवृत्ति हो सकती है। अर्थ की भी समानता होती है, किंतु तात्पर्य में अन्तर रहता है। जहाँ तक तात्पर्यभेद की बात है, तो उदाहरण के लिए किसी के पूछने पर कि लड़का कैसा है? तो उत्तर मिलता है — 'लड़का तो लड़का ही है।' यहाँ 'लड़का' शब्द के साथ-साथ उसके अर्थ की भी आवृत्ति हुई है, पर दोनों के अर्थ में तात्पर्य भेद यह है कि रेखांकित पहला 'लड़का' सामान्य लड़के का अर्थ प्रकट करता है जबकि दूसरा 'लड़का' (रेखांकित) उसके रूप, गुण, स्वभाव, चरित्र आदि की ओर संकेत करता है।

काव्य में उदाहरण — (1) "पंकज तो पंकज, मृगांक भी है मृगांक री प्यारी।
मिली न तेरे मुख की उपमा देखी वसुधा सारी॥"

— यहाँ पहले 'पंकज' का अर्थ सामान्य कमल है जबकि दूसरे का अर्थ है — कीचड़ और गंदगी से उत्पन्न विशेषताहीन कमल। इसी तरह प्रथम 'मृगांक' का अर्थ सामान्य चन्द्रमा है जबकि दूसरे 'मृगांक' का अर्थ है — कलंकित चन्द्रमा। दागदार चन्द्रमा। इस तरह शब्द के साथ अर्थ की आवृत्ति के बावजूद दोनों के तात्पर्य में अंतर है। अतः यहाँ लाटानुप्रास अलंकार है।

(1) "तीरथ व्रत साधन कहा, जो निसदिन हरिगान।
तीरथ व्रत साधन कहा, बिन निसदिन हरिगान॥"

— यहाँ 'जो' के साथ अन्वय करने पर पहली काव्य-पंक्ति का तात्पर्य है कि जब रात-दिन भगवान का भजन चलता रहता है तो तीर्थयात्रा और व्रत-साधना से क्या लाभ? अर्थात् भगवान का भजन-कीर्तन पर्याप्त है। दूसरी काव्य-पंक्ति में 'बिन' के साथ अन्वय करने पर तात्पर्य यह निकलता है कि बिना भगवान का भजन-कीर्तन किये तीर्थयात्रा और व्रत-साधन व्यर्थ हैं।

इस प्रकार, शब्द और अर्थ की आवृत्ति के बावजूद तात्पर्यमात्र के भेद से यहाँ लाटानुप्रास अलंकार है।